ॐ

श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित बावन जिनालय पूजन

स्थापना

(चान्द्रायण)

अष्टम द्वीप श्री नन्दीश्वर जाइये।
चारों दिशि के बावन जिनगृह ध्याइये॥
एक शतक त्रेसठ सुकोटि योजन महा।
विस्तृत लाख चुरासी इक इक दिशि महा॥

पूरब दक्षिण पश्चिम उत्तर हैं सुवन।
तेरह तेरह चारों दिशि बावन भवन॥
प्रकृति स्वयं श्रृंगारित करती द्वीप को।
रवि शशि वन्दन करते नाथ महीप को॥

अष्टान्हिका पर्व में आते इन्द्र सुर।
अष्ट दिवस पूजा करते समवेत स्वर॥
अवतंसादिक देव यहाँ रहते सदा।
जिनप्रभु की जय ध्वनि गुंजित करते सदा॥

मनुज लोक आगे हम जा सकते नहीं।
अत: भाव से पूजन करते हैं यहीं॥
हम अब पूजें अष्टम द्वीप प्रधान को।
अष्ट द्रव्य प्रासुक ले विश्व प्रधान को॥

विनय भाव से यहीं हृदय में थापकर।
प्रतिगृह इकशत वसु बिम्बों का जाप कर॥
पाँच सहस छह सौ सोलह जिनबिम्ब सब।
पूजन करके निरखे निज प्रतिबिम्ब अब।

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्ब अत्र अवतर अवतर संवौषट् (इत्याह्वाननम्) ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्ब अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ: (इति स्थापनम्) ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्ब अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट् इति (सन्निधिकरणम्)

अष्टक

(पीयूष राशि)

वासना का जल भरा है अंतरंग।
कामनाएँ सहस्त्रों हैं नाथ संग॥
किस तरह हो जन्म मृत्यु अभाव प्रभु।
जागरूक न हो सका निज भाव विभु॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्तिनभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

भावना चंदन सहज कैसे मिले।
ज्ञान अम्बुज पूर्णतः कैसे खिले॥
ताप भव-ज्वर का हटे कैसे प्रभो।
मोह भ्रम-तम नष्ट हो कैसे विभो॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्तिनभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

शालि अक्षत श्रम बिना कैसे उगें।
वासना के मार्ग से कैसे चिगें॥
स्व-पद अक्षय का पता कैसे लगे।
मोह-भ्रम अज्ञान प्रभु कैसे भगे॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्ति नभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

काम पीड़ा से सतत व्याकुल रहा।
वासनाओं से सदा आकुल रहा॥
कामशर की वेदना जाती नहीं।

भावना निष्काम उर आती नहीं॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्तिनभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

विष भरे नैवेद्य खाता रहा हूँ।
पुनः मर मर यहीं आता रहा हूँ॥
शुद्ध अनुभव चरु कहीं मिलते नहीं।
क्षुधा रूप पिशाच तो हिलते नहीं॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्तिनभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मोह तम छाया हुआ है अंतरंग।
इसलिये मिथ्यात्व का है सदा संग॥
ज्ञान की लौ हे प्रभो जलती नहीं।
भव भ्रमण की वेदना खलती नहीं॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्तिनभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

कर्म ज्वाला जलाती प्रति-पल प्रभो।
वज्र पौरुष भी हुआ मिथ्या विभो॥
अष्ट कर्म विनाश का बल दो मुझे।
कर्म विरहित दशा दो उज्ज्वल मुझे॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्तिनभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

कंटको से मुक्ति पथ भरपूर है।
हृदय मेरा मोह मद में चूर है॥
मोक्षफल की प्राप्ति ही सुखदायिनी।
ज्ञान की सौदामिनी दुखहारिणी॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्तिनभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

अभी तक तो हैं विभावी अर्घ्य सब।
स्वयं की हो बोधि उत्तम नाथ अब॥
पद अनर्घ्य अपूर्व मेरे पास में।
जी न पाया आत्म के विश्वास में॥
मिल गए आनंद ईश्वर ज्ञान से।
आत्म सुख होता स्वयं के भान से॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय पूज लूँ।
मुक्तिनभ की विमल उज्ज्वल दूज लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाऽर्घ्य

सोरठा

नन्दीश्वर जिनधाम बावन पूजूँ भाव से।
इन्द्रों जैसा भाव उर धर अर्घ्य चढ़ाऊँ मैं॥

विजात (तुम्ही हो माता पिता तुम्ही हो)

ये कर्म आठों मुझे फंसाकर इतर निगोदों में भेजते हैं।
कषाय थोड़ी सी मंद करके ये स्वर्ग सुख भी सहजते हैं॥

विराग जगता है जब कभी भी विभाव सारे आ घेरते हैं।
ये राग की रागिनी सुनाकर स्वभाव मेरा विनाशते हैं॥

समय न समकित का पाने देते ये रंग मिथ्यात्व ही पोतते हैं।
स्वभाव को जागने न देते मुझे तो सोते ही जोतते हैं॥
विभाव मुझमें कभी न आते ये मेरे ऊपर ही तैरते हैं।
कृपालु सद्गुरु मुझे जगाने बड़े प्रयत्नों से टेरते हैं॥

मैं जाग जाता हूँ नींद से जब तो मुझको कोई न रोकते हैं।
प्रयाण करता हूँ अपने पथ पर तो मुझको कोई न टोकते हैं॥
लडूँगा उनसे जो मुझको भव-दुख भरे समुद्रों में भेजते हैं।
अतः सुरासुर प्रसन्न होकर चकित हो मुझको ही देखते हैं॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

दोहा

क्षमा आदि दश धर्म धर आप हुए जिनराज।
संयम श्रेणी पर चढ़े पा निजपुर साम्राज्य॥

(विधाता)

क्षमा की भावना लाऊँ क्रोध पर नाथ जय पाऊँ।
हृदय में साम्यभावों की सरित का नीर मैं लाऊँ॥
विनय का भाव उर लाऊँ नहीं अभिमान हो मन में।
निरभिमानी विनयपति बन रहूँ निज आत्म-उपवन में॥

सरलता पूर्ण ऋजुता हो, न माया भाव हो स्वामी।
कपट के भाव सब चूरूँ वरूँ शुद्धात्मा नामी॥
शौच निर्दोष हो मन में लोभ का भाव सब क्षय हो।
परम शुचिमय बनूँ स्वामी प्रभो सर्वत्र जय जय हो॥

कषायें चार क्षय करके बनूँ अकषाय गुण स्वामी।
साम्यभावी सहज जीवन बनाऊँ भव्य निज नामी॥
पंच इन्द्रिय विषयसुख का राग उर में न हो किंचित।
तत्त्व का भाव सम्यक् हो ध्येय निजधर्म हो निश्चित॥

ज्ञान दर्शनमयी जीवन बिताऊँ नाथ मैं अपना।
पूर्व में भोग जो भोगे न आए उनका भी सपना॥
भोग वांछा भविष्यत की न जागे नाथ निज उर में।
बनूँ मैं निस्पृही भगवन रहूँ मैं शुद्ध निजपुर में॥

विगत जीवन को भूलूँ मैं पाप के भाव क्षय कर लूँ।
स्वयं की शक्ति जागृत कर सकल संसार जय कर लूँ॥
शुद्ध भावों में रस आए साम्यभावी बनूँ स्वामी।
मोह अरू क्षोभ को जीतूँ बनूँ त्रैलोक्य पति नामी॥

रंच क्रोधादि आस्रव को न आने दूँ कभी भीतर।
शुद्ध संवर हदय में हो सजाऊँ शुद्ध मैं अंतर॥
यहाँ से ही करूँ प्रारंभ अपना ध्येय शिव सुख का।
मोक्ष का मार्ग पाऊँ मैं नाम जिसमें नहीं दुख का॥

वीतरागी स्वभावों का सदा ही मैं करूँ आदर।
राग का कण न हो उर में सफलता प्राप्त हो सत्वर॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्थित द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

नन्दीश्वर जिनचैत्य की पूजन का उद्देश्य।
भव्य भावना प्रगट हो यही विनय परमेश॥

पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्

ऊंचे ऊंचे शिखरो वाला रे, यह तीरथ हमारा।
तीरथ हमारा हमें लागे प्यारा॥टेक॥

श्री जिनवर भेंट करावें, जग को मुक्ति मार्ग दिखावें॥
मोह का नाश करावे रे, यह तीरथ हमारा॥१॥

शुद्धातम से प्रीति लगावे, जड़-चेतन को भिन्न बतावे॥
भेद-विज्ञान करावे रे, यह तीरथ हमारा॥२॥

नंदीश्वर द्वीप की

पूर्वदिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन

स्थापना

(वीरछन्द)

पूर्व दिशा नंदीश्वर दिव्य त्रयोदश जिन चैत्यालय भव्य।
सर्व अकृत्रिम कंचनमय हैं स्वर्ण कलश नव नूतन नव्य॥
इक अंजनगिरि कृष्ण वर्ण है चारों दधिमुख श्वेत ललाम।
आठों रतिकर लाल वर्ण हैं इस प्रकार तेरह जिनधाम॥

रत्न वापिकाएँ जल पूरित एक लाख योजन जलमय।
दधिमुख मध्य वापिका गिरि दो कोणों पर रतिकर जय-जय॥
चंपक आम्र अशोक सप्तच्छद चारों वन सुषमा सुविशाल।
महा मनोहर दृश्यावलि है मोहित सुर होते तत्काल॥

एक शतक वसु रत्न बिम्ब प्रत्येक जिनालय रहे विराज।
पूजन करके आत्मध्यान के बलसे पाऊँ सुख साम्राज्य॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र अवतर अवतर संवौषट् (इत्यावाहननम्)

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः (इति स्थापनम्)

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम्)

अष्टक

(दिग्वधू)

रागादि भाव-हिंसा तज कर बनूँ अहिंसक।
जन्मादि रोग नाशूँ नर भव करूँ मैं सार्थक॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्रोधादि भाव क्षयकर उर क्षमा गुण सजाऊँ।
दर्शनविशुद्धि पाकर निज वाद्य नित बजाऊँ॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारताप विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

मानादि दुष्ट जीतूँ उर विनय भाव लाऊँ।
सिद्धत्व प्राप्ति के हित शुद्धात्मतत्त्व ध्याऊँ॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

मायादि शल्य जीतूँ ऋजुता हृदय सजाऊँ।
दुर्दान्त काम नाशूँ परिपूर्ण शील पाऊँ॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाण विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

लोभादि वासना का संपूर्ण नाश कर दूँ।
प्रभु शौच भावना का जग में प्रकाश कर दूँ॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोग विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

हिंसादि पाँच पापों का अंत अब करूँगा।
निज ज्ञान-दीप लेकर अज्ञानतम हरूँगा॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकार विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

द्वादश सुभावनामय वैराग्य भाव लाऊँ।
ध्यानाग्नि बीच अब तो कर्मादि सब जलाऊँ॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

व्रत समिति गुप्ति पालूँ चारित्र उर सजाऊँ।
अविलंब मोक्षफल का आनंद नित उठाऊँ॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

चारित्र त्रयोदश विधि का अर्घ्य मैं बनाऊँ।
पदवी अनर्घ्य अविकल अविकार नाथ पाऊँ॥
जिनमार्ग श्रेष्ठ पाकर उन्मार्ग छोड़ दूँ मैं।
अपने स्वभाव से ही निज प्रीति जोड़ दूँ मैं॥
पूरब दिशा नंदीश्वर मैं हर्ष सहित जाऊँ।
सिद्धायतन त्रयोदश मैं भाव सहित ध्याऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली

पूर्व दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालयों का अर्घ्य

(सोरठा)

पूर्वदिशा जिनबिम्ब नंदीश्वर के पूजिए।
अन्तर्मुख जिनबिम्ब चौदह सौ अरु चार हैं॥

(सरसी)

जल फलादि वसु द्रव्य अर्घ्य मैं लाया हूँ जिनदेव।
जन्म मरण दुख नाश करूँगा निज बल से स्वयमेव॥

नंदीश्वर की पूर्व दिशा जिन चैत्यालय ध्याऊँ।
अंजनगिरि के जिन-मंदिर को शीष झुका आऊँ॥
चौरासी सहस्त्र योजन ऊँचा अंजनगिरि जान।
गोलाकार ढोल सम मनहर महिमा लूँ पहचान॥१॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित अंजनगिरिजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि की चारों दिशि में एक एक वापी।
एक लाख योजन जल पूरित की महिमा व्यापी॥
पूर्व दिशा नंदावापी के दधिमुख पर्वत श्वेत।
भाव पूर्वक अर्घ्य चढ़ाऊँ, स्व पर ज्ञान के हेत॥
ऊँचा सहस्त्र योजन है यह दधिमुख गोलाकार।
इकशतवसु प्रतिमा सिद्धों सम प्रति मंदिर अविकार॥२॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदावापीमध्यदधिमुखपर्वतस्थित-जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदावापी की ईशान दिशा सुन्दर पर्वत।
रतिकर सुन्दर नाम जिनालय पर्वत पर शोभित॥
रतिकर पर्वत एक सहस्त्र योजन ऊँचा है जान।
लालवर्ण का मणि-माणिक से खचित स्वर्णमय जान॥
इन्द्र-शची सुर सुरांगनाएँ नाचे भाव विभोर।
कोटि कोटि मृदुवाद्यों की ध्वनि गूँज रही चहूँ ओर॥३॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदावापीईशानकोणे रतिकरपर्वत-स्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी नंदा आग्नेय दिशि रतिकर पर्वत लाल।
भाव सहित मैं अर्घ्य चढ़ाऊँ चैत्यालय सुविशाल॥
सप्त तत्त्व का निर्णय करके करूँ आत्म कल्याण।
निजस्वरूप को निरख-निरख कर पाऊँ पद निर्वाण॥
निज स्वरूप साधना लीन वे ही सच्चे अनगार।
भाव-द्रव्य दोनों संवारते महिमा अपरंपार॥४॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थितनंदावापीआग्नेयकोणे रतिकरपर्वत-स्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दक्षिण वापी नंदवती में दधिमुख पर्वत है।
स्वर्णमयी जिनवर चैत्यालय अनुपम शाश्वत है॥
सतत निरंतर प्रतिपल प्रतिक्षण निज को ही ध्याऊँ।
आत्म ध्यान फल महा मोक्षफल हे प्रभु मैं पाऊँ॥
उपादान का मात्र नाम ले जिन-पूजन तजता।
वह सिद्धत्व नहीं पा सकता मात्र भ्रान्ति भजता॥५॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदवतीवापीमध्यदधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदवती वापी निर्मल जलमय शोभाशाली।
आग्नेय में रतिकर पर्वत गृह सुषमाशाली॥
महाध्वजाएँ लघु ध्वजा सह नभ में लहराती।
स्वर्ण कलश की दिव्य प्रभाएँ नभ से बतियाती॥
उपादान का आश्रय लेकर जो निमित्त जाने।
जागरूक हो वह सिद्धत्व स्वपद पाकर माने॥६॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदवतीवापी आग्नेयकोणे रतिकर-पर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदवती वापी नैऋत्य कोण में पर्वत जान।
रतिकर नाम बड़ा सुन्दर है जिनगृह इक छविमान॥
जो भी ज्ञानी हुए और जो वर्तमान होते।
जो भविष्य में होंगे वे सब मार्ग एक जोते॥
इन्द्रियज्ञान हेय मैं जानूँ ज्ञान अतीन्द्रिय श्रेष्ठ।
साम्य भाव धारूँ अंतर में राग-द्वेष तज नेष्ठ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदवतीवापीनैऋत्यकोणे रतिकर-पर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नंदोत्तरा सुवापी पश्चिम दधिमुख श्वेत विशाल।
रत्न-बिम्ब शोभित चैत्यालय पूजूँ प्रभु तत्काल॥
नारी तन को देख न जागे विषयेच्छा का भाव।
मैं भगवान समान रहूँ प्रभु हो निष्काम स्वभाव॥

अपरिग्रही अनिच्छुक बनकर धारूँ जिन मुनिवेश।
अट्ठाईस मूलगुण पालूँ लुंचुँ सिर के केश॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदोत्तरावापीमध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पश्चिम नंदोत्तरावापि नैऋत्य कोण सुन्दर।
स्वर्णमयी श्री जिनचैत्यालय अति मनोज्ञ मनहर॥
''मत्थएणवंदामि'' जिनेश्वर को जो भी करते।
जिनस्वरूप लख निजस्वरूप की महिमा को लखते॥
निर्मल आत्म स्वभाव लखूँ मैं मोह भाव क्षय कर।
सर्व कषाय कलंक मिटाऊँ अविरति को जय कर॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदोत्तरवापीनैऋत्यकोणे रतिकर-पर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी नंदोत्तरा सुपश्चिम दिशि वायव्य सुकोण।
रतिकर स्वर्णमयी चैत्यालय की शोभा ज्यों भौन॥
विमल भावना द्वादश भाऊँ करूँ आत्म चिन्तन।
भव तन भोग विराग जगाऊँ नाशूँ भ्रम तम घन॥
ज्ञान कुंज में चलो सुचेतन विविध गंध जानो।
मति श्रुति अवधि मनःपर्यय कैवल्यमयी मानो॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदोत्तरावापीवायव्यकोणे रतिकर-पर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

उत्तर दिशि वापिका सुनंदीघोषा महा विशाल।
दधिमुख पर्वत का चैत्यालय है भव्यों की ढाल॥
सम्यक् श्रद्धा का बल पाकर पाऊँ सम्यक् ज्ञान।
निश्चय संयम भाव जगाऊँ करूँ कर्म अवसान॥
है ज्ञायक स्वभाव पर जिनकी दृष्टि वही है संत।
निज स्वरूप अवलंबन लेकर होते है भगवंत॥११॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदीघोषावापीमध्य दधिमुखपर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी नंदीघोषा के वायव्य कोण में एक।
मंदिर स्वर्णिम रतिकर पावन रक्त वर्ण का एक॥
जिन-दर्शन कर निज-दर्शन का जो करते पुरुषार्थ।
वही जीव कुछ क्षण में पा लेते निश्चय भूतार्थ॥
एक मात्र ज्ञायक स्वभाव ही मेरा शाश्वत है।
ध्रौव्य स्वभावी शुद्ध आत्मा में होना रत है॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदीघोषावापीईशानकोणे रतिकर-पर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी नंदीघोषा के ईशान कोण में भव्य।
स्वर्णमयी रतिकर चैत्यालय पूजूँ निज दृष्टव्य॥
तन्मय होकर जिसने अपना निज स्वभाव ध्याया।
उसने ही संसार नाशकर शाश्वत सुख पाया॥
श्री जिनवर की दिव्यध्वनि जो अंतरंग धरते।
वे ही प्राणी मोक्षमार्ग पाते भव-दुख हरते॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित नंदीघोषावापीवायव्यकोणे रतिकर-पर्वतस्थित जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाऽर्घ्य

(चान्द्रायण)

गुण अनंत का चेतन में सद्भाव है।
दर्शन ज्ञान वीर्य सुख आत्म स्वभाव है॥
चिरमिथ्यात्व मोह का दुखद प्रभाव है।
अनंतानुबंधी का उर में भाव है॥

इसीलिये समकित का अभी अभाव है।
अप्रत्याख्यानावरणी का घाव है॥
एकदेश संयम का अतः अभाव है।
अविरति दुष्टा का ही पूर्ण प्रभाव है॥

प्रत्याख्यानावरणी का उर भाव है।
चिर प्रमाद का तब तक दुष्ट प्रभाव है॥

पूर्णदेशसंयम का अतः अभाव है।
जब चारों कषाय का ही उर भाव है॥
तीनों योगों का भी पूर्ण प्रभाव है।
कर्मबंध पाँचों कारकों का भाव है॥

जब तक इन पाँचों प्रत्यय का भाव है।
तब तक पर ममत्व का उर में भाव है॥
जागृत होने का पुरुषार्थ न जागृत।
सोचो कैसे होगा शिव सुख शाश्वत॥

चलो सिद्धपुर की बस्ती में ही चले।
संज्ञ असंज्ञ आस्त्रव भावों को दलें॥
अविनाशी शाश्वत सुख का सद्भाव है।
दर्शन ज्ञान वीर्य सुख आत्म स्वभाव है॥

(सोरठा)

महिमा अपरम्पार, है नंदीश्वर द्वीप की।
महाऽर्घ्य सुखकार विनयसहित अर्पण करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(वीरछन्द)

ध्रुव चैतन्य धातु निर्मित है ज्ञान शरीरी द्रव्य प्रधान।
किन्तु भूल से बंद कर्म पिंजरे में है यह दुखी महान॥
कैसे छूटे भव पिंजरे से किया न मैंने आत्म विचार।
नहीं तत्त्वनिर्णय का भी पाया जीवन में यह आधार॥

कैसे हो उद्धार मार्ग छुटकारे का कैसे पाए?।
कैसे स्व-पर विवेक जगाएँ कैसे अपने में आए॥
श्री गुरु समझा समझा हारे किन्तु न मैं भव से हारा।
श्री गुरु ने समकित औषधि दी किन्तु न मैंने स्वीकारा॥

निकट भव्य हूँ फिर भी मेरे लक्षण दिखे अभव्य समान।
निज दर्शन करते ही होगा, निकट भव्य आचरण महान॥
श्री जिनवर ने हमें बताया काललब्धि पुरुषार्थाधीन।
निज पुरुषार्थ जगा विवेक से भेद-ज्ञान कर ज्ञान प्रवीण॥

इतना करते ही मैं पथिक बनूँगा शिवपथ का तत्काल।
रत्नत्रय का मुकुट सजाते ही होऊँगा परम विशाल॥

सिद्धपुरु के द्वार खुलेंगे शोभित वन्दनवारों से।
निजानंद प्रतिपल बरसेगा मुक्तिवधू मनुहारों से॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पूर्वदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

भवन त्रयोदश पूजकर करूँ आत्मकल्याण।
निज शुद्धात्म स्वभाव का करूँ प्रभो मैं ज्ञान॥
पूर्व दिशा के बिम्बों को वंदन करता आज।
ध्रुव-शाश्वत-सुखमय मिले मुझको निजपद राज॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

आयो आयो रे हमारो बड़ो भाग कि हम आए पूजन को।
पूजन को प्रभु दर्शन को, पावन प्रभु-पद पर्शन को।।टेक॥

जिनवर की अर्न्तमुख मुद्र आत्म दर्श कराती।
मोह महामल प्रक्षालन कर शुद्ध स्वरूप दिखाती॥१॥

भव्य अकृत्रिम चैत्यालय की जग में शोभा भारी।
मंगल ध्वज ले सुरपति आए शोभा जिसकी न्यारी॥२॥

अनेकान्तमय वस्तु समझ जिन शासन ध्वज लहरावें।
स्याद्वाद शैली से प्रभुवर मुक्ति मार्ग समझावें॥३॥

नंदीश्वर द्वीप की
दक्षिण दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन

स्थापना

(चान्द्रायण)

दक्षिण दिशि नंदीश्वर दिव्य त्रयोदशम्।
रत्न बिम्ब से शोभित स्वर्ण जिनालयम्॥
पूर्व दिश सम शेष सर्व रचना शुभम्।
इन्द्र सुरों द्वारा वन्दित दक्षिणेश्वरम्॥

सत्यम शिवम् सुन्दरम् महा मनोहरम्।
हृदय विराजित करूँ तुम्हें जगदीश्वरम्॥
विनय सहित मैं भाव द्रव्य पूजन करूँ।
भरत क्षेत्र से ही सादर वन्दन करूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनं)

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम्)

अष्टक

(राधिका)

शुद्धात्म ज्ञान का निर्मल जल प्रभु लाऊँ।
जन्मादिक त्रिविध व्याधियाँ सर्व नशाऊँ॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म भावना चंदम है प्रभु लाऊँ।
संसारताप ज्वर पूरा ही विनशाऊँ॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म भावना अक्षत हृदय सजाऊँ।
अक्षय पद पाऊँ फिर न लौट कर आऊँ॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म कुसुम सिद्धत्व सुरभिमय लाऊँ।
कामादि पीर क्षय करके शील सजाऊँ॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म सुचरु निज अनुभव रसमय लाऊँ।
जठराग्नि बुझाऊँ वेदनीय विनशाऊँ॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म दीप ज्ञानात्मक शीघ्र जलाऊँ।
मोहान्धकार क्षय करूँ परम सुख पाऊँ॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहान्धकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म धर्म की धूप ध्यानमय लाऊँ।
कर्माग्नि ज्वाल को मैं सम्पूर्ण बुझाऊँ॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र, पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म धर्म के फल अपूर्व मैं लाऊँ।
परिपूर्ण आत्म बल से शिवसुख फल पाऊँ॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्धात्म भाव के अर्घ्य अपूर्व बनाऊँ।
अपना अनर्घ्य पद शाश्वत अब प्रगटाऊँ॥
ज्ञानाब्धि तरंगों के स्वामी अविनश्वर।
आनंद ईश्वर तुम ही हो जगदीश्वर॥
पूजूँ दक्षिण दिशि नंदीश्वर चैत्यालय।
प्रभु कृपा शीघ्र पाऊँगा मैं सिद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली

दक्षिण दिशा सम्बन्धी त्रयोदश जिनालयों को अर्घ्य

(सोरठा)

दक्षिण दिशि जिनबिम्ब नंदीश्वर के पूजिए।
अन्तर्मुख जिनबिम्ब चौदह सौ अरु चार हैं॥

(राधिका)

नंदीश्वर दक्षिण दिशा जिनालय ध्याऊँ।
अंजनगिरि पर्वत पर जा शीष झुकाऊँ॥
रत्निम जिन प्रतिमाओं को सादर वन्दूँ।

स्वर्णिम जिन चैत्यालय सविनय अभिनन्दूँ॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥१॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित अंजनगिरिजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि पूरब अरजा वापी मनहर।
दधिमुख पर्वत पर श्रेष्ठ जिनालय सुन्दर॥
वापी की चारों दिशा सुवन चउ शोभित।
स्वर्गों के इन्द्रादिक सुर सब ही मोहित॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥२॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित अरजावापीमध्यदधिमुख-पर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरजावापी ईशान कोण अति प्यारा।
रतिकर पर्वत है महा मनोहर न्यारा॥
जिन चैत्यालय इस पर शोभित स्वर्णिम है।
इसमें इकशत वसु प्रतिमाएँ रत्निम हैं॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित अरजावापीईशानकोणे-रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अरजा वापी आग्नेय कोण रतिकर है।
इस पर्वत के ऊपर मंदिर सुन्दर है॥
मैं मोह-राग-द्वेषादि भाव क्षय कर लूँ।
पूर्णत्व भावना भाते ही दुख हर लूँ॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित अरजावापीआग्नेयकोणे-रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि दक्षिण दिशि विरजा वापी में।
दधिमुख वन्दूं क्या है आराधापी में॥
स्वर्णिम जिन चैत्यालय का नित अभिनंदन।
रत्निम जिन-प्रतिमा एक शतक वसु वंदन॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित विरजावापीमध्यदधिमुख-पर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विरजावापी आग्नेय कोण मैं जाऊँ।
रतिकर पर्वत का भव्य जिनालय ध्याऊँ॥
अवसर पाया है आज बड़ी मुश्किल से।
जुड़ जाऊँ प्रभु अपने स्वभाव में दिल से॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित विरजावापीआग्नेयकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

नैऋत्य कोण विरजा वापी का पर्वत।
दूजा जिन चैत्यालय मैं पूजूँ जिनवर॥
भवरंग मुझे अब तनिक न शोभा देगा।
निजरंग अभी उर में शिव सुख भर देगा॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥७॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित विरजावापीनैऋत्यकतोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि पश्चिम दिशा अशोका वापी।
दधिमुख पर्वत जिनगृह की छवि उर व्यापी॥
क्रोधाग्नि बुझाने नाथ शरण में आया।
अब क्षमा भाव की महिमा उर में लाया॥

सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित अशोकवापीमध्यदधिमुख-पर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है वापि अशोका दिशि नैऋत्य सुपावन।
पहिले रतिकर पर चैत्यालय मन भावन॥
मैं मान कषाय मिटाने को प्रभु आया।
उर विनय भावना अल्प सजाकर लाया॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित अशोकावापीनैऋत्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है दिव्य अशोका वापि कोण वायव्य।
दूजे रतिकर पर स्वर्ण जिनालय भव्य॥
मायादि भाव तज सादर जिनगृह वन्दूं।
ऋजुता धन पाकर जिन प्रभु को अभिनन्दूं॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित अशोकावापीवायव्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि दक्षिण दिशा सु दधिमुख पर्वत।
है मध्य वीतशोका सुवापि गृह शाश्वत॥
लोभादि विकारी भाव पूर्णतः नाशूँ।
उर शौच धर्म युत उज्ज्वल ज्ञान प्रकाशूँ॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥११॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित वीतशोकावापीमध्यदधिमुख-पर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है निकट वीतशोका के सुन्दर पर्वत।
वायव्य कोण में महा मनोहर शोभित॥
पहिला रतिकर जिन चैत्यालय सुखकारा।
चारों कषाय नाशक स्वभाव मन हारा॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित वीतशोकावापीवायव्यकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिशि वापि वीतशोका ईशान सुझाऊँ।
रतिकर पर्वत की प्रदक्षिणा कर आऊँ॥
जिन चैत्यालय अकृत्रिम प्रतिदिन वन्दूं।
रत्निम प्रतिमाएँ भाव सहित अभिनन्दूँ॥
जिन धर्म प्राप्त कर भी जो है अज्ञानी।
है होनहार खोटी उनकी दुख दानी॥
सम्यग्दर्शन के पावन वाद्य बजाऊँ।
शुद्धात्म भावना अपने हृदय सजाऊँ॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित वीतशोकावापीईशानकोणे रतिकरपर्वतजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाऽर्घ्य

(ताटक)

निज शुद्धात्म तत्त्व के भीतर रवि कैवल्य स्वज्ञान निरख।
स्व-पर प्रकाशक निज स्वभाव को चाहे जैसे अरे परख॥

भ्रान्तमार्ग से हो निर्भ्रान्त अनात्म तत्त्व से त्याग ममत्व।
निज स्वरूप का विश्लेषण कर मुझे प्राप्त होगा सम्यक्त्व॥

अनहदनाद गुँजा लूँ उर में जगा भावना शुद्ध अलख।
एक त्रिकाली ध्रुव स्वरूप को प्रतिपल प्रतिक्षण निरख निरख॥

(दोहा)

महा अर्घ्य अर्पण करूँ दक्षिण दिशि जिनधाम।
नन्दीश्वर जिन पूजकर निज में करूँ विराम॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(मनसवैया)

मौसम समकित का आया है निज-अनुभव रस से घट भर लूँ।
वसु कर्म बादरी नष्ट करूँ क्षय मिथ्यातम के पट कर लूँ॥
यह समय चक्र रुकता न कभी चाहे कितना ही यत्न करूँ।
यदि मोक्ष मुझे पाना है तो ध्रुव की धुन से ही लग्न करूँ॥

भायी फिर पर की गंध अगर तो फिर निगोद जाना होगा।
भायी है यदि चैतन्य गंध तो मुक्ति गोद पाना होगा॥
दोनों ही मार्ग उपस्थित है केवल इक को चुनना होगा।
कोई भी साथ न जाएगा मुझको निज पट बुनना होगा॥

तोड़ूँ विभाव के चक्कर को अपने स्वभाव में आ जाऊँ।
शिवसुख की आकांक्षा है तो अपने स्वरूप में रम जाऊँ॥
क्रोधादि क्रोध में होता है मोहादि मोह में होता हैं।
उपयोग सदा उपयोगों में ही व्यापक होकर रहता है॥

होता है जब पुण्योपयोग तब जिय पुण्यी कहलाता है।
होता है जब पापोपयोग तब जिय पापी कहलाता है॥
होता है जब शुद्धोपयोग प्राणी धर्मी कहलाता है।
मैं प्रगट करूँ शुद्धोपयोग जो ज्ञायक में रम जाता है॥

यदि सम्यग्ज्ञान हृदय में हो तो फिर आस्रव रुक जाता है।
आस्रव का रुकना ही संवर सर्वज्ञ कथन में आता है॥
यह संवर भाव प्रकट हो प्रभु इसलिये भाव से की पूजन।
नंदीश्वर दक्षिण दिशि तेरह चैत्यालय पूजे मन भावन॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य दक्षिणदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

पूजन करके हे प्रभो करूँ स्वयं का भान।
सम्यग्दर्शन प्राप्त कर पाऊँ सम्यक् ज्ञान॥
नंदीश्वर दक्षिण दिशा भवन त्रयोदश पूज।
तत्क्षण ही पायो प्रभो आत्मज्ञान की दूज॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

शुद्धात्मा का श्रद्धान होगा निज आत्मा तब भगवान होगा।
निज में निज, पर में पर भासक, सम्यग्ज्ञान होगा॥टेक॥

नव तत्त्वों में छिपी हुई जो ज्योति उसे प्रगटायेंगे।
पर्यायों से पार त्रिकाली ध्रुव को लक्ष्य बनायेंगे॥
शुद्ध चिदानन्द रसपान होगा निज आत्मा तब भगवान होगा॥१॥

निज चैतन्य महा-हिमगिरि से परणति-घन टकरायेंगे।
शुद्ध अतीन्द्रिय आनन्द रसमय अमृत-जल बरसायेंगे॥
मोह महामल प्रक्षाल होगा निज आत्मा तब भगवान होगा॥२॥

आत्मा के उपवन में रत्नत्रय पुष्प खिलायेंगे।
स्वानुभूति के सौरभ से निज नन्दन वन महकायेंगे॥
संयम से सुरभित उद्यान होगा निज आत्मा तब भगवान होगा॥३॥

आओ रे आओ रे ज्ञानानंद की डगरिया।
तुम आओ रे आओ, गुण गाओ रे गाओ।
चेतन रसिया आनन्द रसिया॥टेक॥

बड़ा अचम्भा होता है, क्यों अपने से अनजान रे।
पर्यायों के पार देख ले, आप स्वयं भगवान रे॥१॥

दर्शन-ज्ञान स्वभाव में, नहीं ज्ञेय का लेश रे।
निज में निज को जान कर तजो ज्ञेय का वेश रे॥२॥

मैं ज्ञायक मैं ज्ञान हूँ, मैं ध्याता मैं ध्येय रे।
ध्यान-ध्येय में लीन हो, निज ही निज का ज्ञेय है॥३॥

नन्दीश्वर द्वीप की

पश्चिम दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन

स्थापना

सार (जोगीरासा)

नंदीश्वर पश्चिम दिश तेरह जिन चैत्यालय ध्याऊँ।
अंजनगिरि दधिमुख रतिकर पर्वत की महिमा गाऊँ॥
शोभाशाली चारों वन लख तन मन से हर्षाऊँ।
रत्न वापिका जल से अपने तन को शुद्ध बनाऊँ॥

प्रसुक द्रव्य सजाऊँ वसु विधि पूजा पाठ रचाऊँ।
श्रेष्ठ भावना द्वादश भाऊँ उर वैराग्य सजाऊँ॥
भव तन भोग उदास बनूँ प्रभु निज की सुरुचि जगाऊँ।
तुव दर्शन करते ही स्वामी चिर मिथ्यात्व भगाऊँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनं)

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्ब अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम्)

अष्टक

(मानव)

अनुपम स्वभाव शाश्वत का निर्मल जल हे प्रभु लाऊँ।
जन्मादि रोग त्रय क्षय हित अपने स्वभाव में जाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शीतल स्वभाव चंदन का मस्तक पर तिलक लगाऊँ।
संसार ताप क्षय करने मिथ्या भ्रम त्वरित भगाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

अक्षय स्वभाव है मेरा उसको ही मैं प्रगटाऊँ।
अक्षय अखंड पद शाश्वत हे नाथ शीघ्र ही पाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

निष्काम भावना बल से ज्वर काम पूर्ण विनशाऊँ।
निधि महाशील की पाकर सिद्धों सम वैभव पाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

निज अनुभव रस के पावन नैवेद्य नाथ मैं लाऊँ।
क्षय क्षुधा वेदना करके सिद्धत्व पूर्ण प्रगटाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

निज ज्ञान दीप ज्योतिर्मय जगमग जगमग मैं लाऊँ।
मोहान्धकार विध्वंसक शुद्धात्म आश्रय पाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

ध्रुवधामी ध्यान धूप ले कर्मोंका काष्ट जलाऊँ।
पद नित्य निरंजन पाकर नित निजानंद रस पाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

अपने स्वभाव साधन से मैं महामोक्ष फल लाऊँ।
शिवपुर में सिद्धशिला पर आनंद अतीन्द्रिय पाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल निर्मल भावों के मैं उत्तम अर्घ्य बनाऊँ।
शाश्वत अनर्घ्य पद पाऊँ हृद्तंत्री तार बजाऊँ॥
नंदीश्वर पश्चिम दिशि के पूजूँ तेरह चैत्यालय।
निर्वाण सौख्य पाने को ध्याऊँ मैं निज शुद्धालय॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली

पश्चिमदिशा सम्बन्धी त्रयोदश जिनालयों को अर्घ्य

(दोहा)

नंदीश्वर पश्चिम दिशा भव्य त्रयोदश धाम।
पूजन कर पाऊँ प्रभो ! ध्रुव निजपुर विश्राम॥

(चौपाई)

नंदीश्वर पश्चिमदिशि जाऊँ, कृष्ण वर्ण अंजनगिरि ध्याऊँ।
जिनचैत्यालय स्वर्णमयी है, त्रिभुवनपूजित शोकजयी है॥
तीर्थंकर भी निज को ध्याते, महामोक्ष फल तत्क्षण पाते।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥१॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित अंजनगिरिजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि पूरवदिशि वापी, विजया लख योजन जल व्यापी।
दधिमुख पर्वत शिखर सुशोभित, जिनचैत्यालय पर सब मोहित॥
जैसे है अरहिंत महा विभु, द्रव्यदृष्टि से उन सम हूँ प्रभु।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥२॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित विजयावापीमध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

विजया के ईशान कोण में मिलता है आनंद मौन में।
रतिकर चैत्यालय अभिरामी, पूजूँ जिनवर त्रिभुवन नामी॥
चंचल मन पर प्रभु जय पाऊँ, अनहद गीत स्वयं के गाऊँ।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥३॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित विजयावापीईशानकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

आग्नेय दिशि विजया वापी, जिनगुण महिमा त्रिभुवन व्यापी।
रतिकर पर्वत कर जिन आलय, मानो अष्टम भू सिद्धालय॥
आत्मज्ञान की गरिमा पाऊँ, निज स्वरूप में ही रम जाऊँ।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥४॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित विजयावापीआग्नेयकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि के दक्षिण वापी, नाम वैजयन्ती जल व्यापी।
ठीक मध्य में पर्वत दधिमुख, पूजूँ जिनगृह हो आत्मोन्मुख॥
धर्म वृद्धि आशीर्वाद पा, शिवसुख पाऊँ निज स्वरूप ध्या।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥५॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित वैजयंतीवापीमध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी वैजयंती रतिकर है, आग्नेय दिशि में गिरिवर है।
भव्य जिनालय भव दुखहारी, भव्यजनों को शिव सुखकारी॥
ज्ञान गगन से मेघ बरसता, जो अभव्य है वही तरसता।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥६॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित वैजयंतीवापीमध्यआग्नेयकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी वैजयंती महिमामय, है नैऋत्य कोण जिन आलय।
रतिकर पर्वत पर विशाल है, इस पर्वत का रंग लाल है॥
आत्म द्रव्य निश्चय अभेद है, कथन मात्र व्यवहार भेद है।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥७॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित वैजयंतीवापीनैऋत्यकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

भव्य जयंती वापी अनुपम, जो अंजनगिरि के है पश्चिम।
ठीक मध्य में दधिमुख पर्वत, शाश्वत जिनचैत्यालय स्वर्णिम॥
मैं अनंत शक्तियों सहित हूँ गुण पर्याय भेद विरहित हूँ।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित जयंतीवापीमध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी सजल जयंती ऊपर, है नैऋत्य कोण गिरि रतिकर।
जिन चैत्यालय अति मनभावन, परम पवित्र ध्यान का साधन॥
वृद्धिगत जिनमार्ग मुक्ति का, पाया है पथ शाश्वत सुख का।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित जयंतीवापीकानैऋत्यकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोण जयंती वापी पर है, दिशि वायव्य एक जिनगृह है।
रतिकर पर्वत दिव्य विमल है, वापी में जल अति निर्मल है॥
पूजूँ रत्निम जिन प्रतिमाएँ, लहराती हैं उच्च ध्वजाएँ।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित जयंतीवापीवायव्यकोणेरतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अंजनगिरि वापी उत्तर में, अपराजिता बस गई उर में।
दधिमुखपर्वत मध्य जिनालय, शत योजन है विस्तृत आलय॥
मुक्ति प्राप्ति की बेला आई, अरहंतों की महिमा गाई।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥११॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित अपराजितावापीमध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी अपराजिता मनोहर, दिशि वायव्य कोण में रतिकर।
जिनगृह कलश ध्वजाओं सज्जित, स्वर्गों की शोभा है लज्जित॥
सिद्ध शिला सिंहासन पाऊँ, फिर न लौटकर भव में आऊँ।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित अपराजितावापी वायव्यकोणे रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी अपराजिता भव्य है, कैसे देखे जो अभव्य है।
है ईशान दिशा में रतिकर, श्री जिन चैत्यालय भव भयहर॥
मुक्ति वधू का पा आमंत्रण, निज स्वभाव ध्याऊँगा क्षण क्षण।
आत्मसाधना कर सर्वोत्तम, मुक्ति प्राप्ति का कर लूँ उद्यम॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित अपराजितावापी ईशानकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाऽर्घ्यं

(दोहा)

पश्चिम दिश जिनगृह जजूँ परम भक्ति से नाथ।
महा अर्घ्य अर्पित करूँ तजूँ न तुम पद साथ॥

(वीरछन्द)

यद्यपि मेरा ही अपना अक्षय वैभव अनर्घ्य जिनराज।
किन्तु भरोसा हुआ न अब तक भव भव भटक रहा हूँ नाथ॥
पर में ही सुख मान रहा हूँ वही दिखा मुझको अनमोल।
किन्तु तुम्हारे दिव्य वचन से जान लिया अब अपना मोल॥
अतः समर्पित है चरणों में भक्ति-भावमय अर्घ्य महा।
प्राप्त करूँ पदवी अनर्घ्य आनंद अतीन्द्रिय बरस रहा॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(दोहा)

नंदीश्वर पश्चिम दिशा तेरह भवन महान।
विनय सहित वन्दन करूँ करूँ आत्मकल्याण॥

(ताटंक)

निज-चिन्तन ही परम सुरक्षा कवच हमारा है अपना।
पर-चिन्तन तो महादुखमयी साता का झूठा सपना॥
निज-चिन्तन से परम ज्ञान का कोषालय खुल जाता है।
निजचिन्तन से महा मोक्ष का मार्ग स्वतः मिल जाता है॥

निज-चिन्तन की महिमा पाता ज्ञानी ज्ञान भाव द्वारा।
निज-चिन्तन पुरुषार्थ शक्ति से कट जाती है भव कारा॥
निज-स्वरूप का चिन्तन करके वस्तु स्वरूप जान अपना।
है एकत्व-विभक्त शाश्वत ज्ञानमयी आत्मा अपना॥

कोई रोक नहीं पाएगा निज चिन्तन से मुझे कभी।
निज चिन्तन तो आत्माश्रित है नहीं पराश्रित रहा कभी॥
आज मिला है निज चिन्तन का अवसर अनायास मुझको।
यही शीघ्र देने वाला है शाश्वत सुख निवास मुझको॥

निज-चिन्तन की श्रेष्ठ सुविधि से अपना निज पद पाऊँगा।
उर उत्कीर्ण शब्द अंकित कर शीघ्र मोक्ष में जाऊँगा॥
भाव-द्रव्यलिंगी मुनिवर बन निज स्वभाव का साधन लूँ।
एक मात्र चिद्रूप शुद्ध का संयममय अनुशासन लूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य पश्चिमदिशास्थित त्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

पूजे जिनगृह आज पश्चिम दिशि नंदीश्वम्।
पाऊँ निज पद राज यही भावना है परम॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

कर्मोदय क्षय क्षयोपशम उपशम से निरपेक्ष।
सहज शुद्ध निर्मल अहो! ज्ञायकभाव अखेद॥

नंदीश्वर द्वीप की
उत्तर दिशा में स्थित त्रयोदश जिनालय पूजन

स्थापना

(विधाता)

श्रेष्ठ है द्वीप नंदीश्वर महा महिमामयी जग में।
जिनालय तक करूँगा नृत्य घुंघरुं बाँधकर पग में॥
त्रयोदश इनकी संख्या है रत्न प्रतिमा सुशोभित है।
अकृत्रिम चैत्य गृह लख कर इन्द्र सुर सर्व मोहित है॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्ब अत्र अवतर अवतर संवौषट्। (इत्याह्वाननम्)

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्ब अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठः ठः। (इति स्थापनं)

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्ब अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्। (इति सन्निधिकरणम्)

अष्टक

(गीतिका)

ध्रुव स्वभावी नीर उज्ज्वल भाव से अर्पण करूँ।
जन्म-मृत्यु-जरा मिटाऊँ कलुषता सारी हरूँ॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

शुद्ध शीतल भाव चन्दन चरण में अर्पित करूँ।
हे जिनेश्वर! मोह का आताप पलभर में हरूँ॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो संसारतापविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

परम शुद्ध स्वभाव अक्षत ज्ञानमय अर्पण करूँ।
पद अखंड अपूर्व अक्षय अतुल आनंदघन वरूँ॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

भाववाही पुष्प सुरभित दोष हर अर्पित करूँ।
महाशील प्रताप से मैं काम शर पीड़ा हरूँ॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

स्वानुभूति महान रसमय सुचरु प्रभु सेवन करूँ।
क्षुधा आदि विनाश हित निज आत्म को वंदन करूँ॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

ज्ञान दीपक प्रज्वलित कर भ्रान्तियाँ सारी हरूँ।
मोह विभ्रम नाश करके क्रान्ति शिवकारी करूँ॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म धर्म सुधूप लाऊँ शुक्ल ध्यान हृदय सजा।
क्षपक श्रेणी देख आठों कर्म सब जाएँ लजा॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अष्टकर्मविनाशनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

आत्म ज्ञान सुफल चढाऊँ मोक्ष फल पाऊँ प्रभो।
सिद्धपुर में सिद्ध पद पा सौख्य पाऊँ हे विभो॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

वसु द्रव्यमय यह अर्घ्य ले प्रभु आत्महित अर्पण करूँ।
आत्मधर्म अनर्घ्यपद की प्राप्ति हित धारण करूँ॥
द्वीप नंदीश्वर जिनालय दिशा उत्तर में जजूँ।
नित्य द्वादश भावना भा निज स्वरूप सदा भजूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदश जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

अर्घ्यावली

उत्तरदिशा स्थित त्रयोदश जिनालयों को अर्घ्य

(दोहा)

नंदीश्वर उत्तर दिशा श्रेष्ठ त्रयोदश धाम।
पूजन कर पाऊँ प्रभो! अपना निज ध्रुव धाम॥

(हरिगीत)

द्वीप नंदीश्वर दिशा उत्तर जिनालय जाइये।
सुगिरि अंजनगिरि जिनेश्वर विनय पूर्वक ध्याइये॥
द्रव्य है वह गुण नहीं है और गुण वह द्रव्य ना।
द्रव्य शुद्ध अभेद निश्चय आपने जिनवर कहा॥१॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितअंजनगिरि जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी रम्या दिशा पूरब सुगिरि अंजनगिरि महान।
मध्य दधिमुख श्रृंग सुन्दर जिनालय है विद्यमान॥
द्रव्य-गुण के भेद को भी भेद कहता जिनागम।
गुणों का परिणमन ही पर्याय कहलाता स्वयं॥२॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितअंजनगिरिरम्यावापी मध्यदधिमुख-पर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी रम्या कोण दिशि ईशान रतिकर गिरि परम।
स्वर्णमय जिन चैत्यालय पूजिये हो सफल श्रम॥
ज्ञान संयोजित करूँ अनुभूति निज योजित करूँ।
शुद्धता चैतन्य ध्रुव की पूर्ण उद्योतित करूँ॥३॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितअंजनगिरिरम्यावापी ईशानकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी रम्या द्वितीय रतिकर भव्य है आग्नेय में।
जिनालय विनयित नमूँ मैं ध्यान हो ध्रुव ध्येय में॥
चित्स्वभावी स्वानुभूति प्रकट कर कल्मष हरूँ।
सर्व भावान्तर विनाशूँ ज्ञान सम्यक् उर धरूँ॥४॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितअंजनगिरिरम्यावापी आग्नेयकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

दिशा दक्षिण वापी रमणीया सुअंजन गिरि महान।
मध्य दधिमुख श्रृंग पर है जिनालय उत्तम प्रधान॥
सहज अशरीरी स्वभावी पूर्ण निज ध्रुव को वरूँ।
ज्ञान गंगा की तरंगे सलिल पा भव दुख हरूँ॥५॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितरमणीयावापी मध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

कोण रमणीया सुवापी आग्नेय दिशा प्रधान।
सुगिरि रतिकर जिनालय है परम पूज्य महा महान॥
नहीं है बंधन कहीं भी मैं सदा ही मुक्त हूँ।
गुण अनंतानंत मंडित शक्तियों से युक्त हूँ॥६॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितरमणीयवापी आग्नेयकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापी रमणीया दिशा नैऋत्य जिनगृह वन्दिए।
सुगिरि रतिकर बिम्ब जिनवर विनय से अभिनंदिए॥
मोक्ष की पर्याय से भी भिन्न हूँ मैं सर्वथा।
नाथ हूँ आनंद का परिपूर्ण है निश्चय यथा॥७॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितरमणीयवापी नैऋत्यकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

मध्य दधिमुख वापिका सुप्रभा की पश्चिम दिशा।
जिन भवन त्रैलोक्य वंदन कर मिटा भव जिजीविषा॥
चैतन्य में सुखसिन्धु है प्रभु! उछलता है प्रतिसमय।
तरंगित होता निरंतर ललकता है प्रति समय॥८॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितसुप्रभावापीमध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

वापिका सुप्रभा है नैऋत्य दिशि में जलमयी।
प्रथम रतिकर जिनालय है सहज ही त्रिभुवन जयी॥
शुद्ध आत्म स्वभाव परमानंदमय ध्रुव धाम है।
चिदानंद स्वभाव निज आपूर्ण है निष्काम है॥९॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितसुप्रभावापी नैऋत्यकोणेरतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुप्रभा वायव्य में रतिकर जिनालय पूजिये।
भावना पूर्वक हृदय से आत्म सन्मुख हूजिये॥
ज्ञान की पर्याय में ही स्व-ज्ञेय या पर-ज्ञेय सब।
झलकते हैं स्वयं ही है पूर्ण ज्ञान प्रकाश अब॥१०॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितसुप्रभावापीवायव्यकोणेरतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सर्वतोभद्रा दिशा उत्तर सुगिरि अंजन विभा।
जिनालय दधिमुख सुमहिमा गा रही है सारिका॥
वीतराग स्वरूप आत्मा सदा षट्कारक सहित।
राग के कर्तृत्व से वह है सदा पूरा रहित॥११॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितसर्वतोभद्रावापी मध्यदधिमुखपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सुगिरि अंजन वापिका सर्वतोभद्रा जानिये।
है दिशा वायव्य में रतिकर महान पिछानिए॥
पर्याय का भी लक्ष्य तजकर द्रव्य निज का लक्ष्य कर।
निर्विकल्पी शुद्ध निज परमात्मा प्रत्यक्ष भज॥१२॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितसर्वतोभद्रावापीवायव्यकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

है दिशा ईशान में सर्वतोभद्रा शुभ सजल।
वापिका के कोण में रतिकर जिनालय है विमल॥
देह मन वाणी तथा तू राग से हो जा पृथक्।
पृथक ही है दृष्टि अपनी शुद्ध कर ले श्रम अथक॥१३॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितसर्वतोभद्रावापी ईशानकोणे-रतिकरपर्वत जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

महाऽर्घ्य

(मत्सवैया)

उन्मुक्त हृदय जब होता है समकित की पवन सुहाती है।
मिथ्यात्व मोह रागिनी बंद होती तत्क्षण उड़ जाती है॥
ज्ञानावलियों की ज्योति मदिर मुस्काती उर में आती है।
चारित्र सरोवर की तरंग ही अन्तर्मन को भाती है॥

संयम के वाद्य सहज बजते अविरति चुपके से जाती है।
निर्मलस्वभाव की शक्ति निरख दुखमय कषाय क्षय पाती है॥
भावना मयी पावन तरणी भव पार स्वयं ही जाती है।
अशरीरी चेतनमय आत्मा शाश्वत ध्रुव सुख विलसाती है॥
हे नाथ! अर्घ्य यह अर्पित कर मैंने अनुपम फल पाया है।
पदवी अनर्घ्य प्रगटाने का अब काल सहज ही आया है॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(सोरठा)

उत्तर दिशा प्रसिद्ध नंदीश्वर की पूजिये।
कंचनमय जिनगेह सभी अकृत्रिम भव्य हैं॥

(मत्तसवैया)

जिससे न बना घर में कुछ भी, वह वन में जा के करेगा क्या।
जिसने मिथ्यात्व नहीं छोडा, कर्मों का तेज हरेगा क्या॥
जिसने अविरति को ना जीता, वह संयम पूर्ण वरेगा क्या।
जिसने न प्रमाद कभी छोड़ा, वह निज चारित्र धरेगा क्या॥

जिसने जीता न कषायों को, वह केवल ज्ञान वरेगा क्या।
जो योग विनष्ट न कर पाया, वह सिद्ध स्वरूप धरेगा क्या॥
जिसने भी भव विष त्याग दिया, वह भव के भाव करेगा क्या।
जिसने पायी अपनी परिणति, पर परिणति संग रहेगा क्या॥
चिद्रूप शुद्ध अनुभव करने वालों को बंध नहीं होता।
आनंद अतीन्द्रिय सागर में कोई भी द्वंद नहीं होता॥
जो थोड़ा सा यदि होता है वह अति निर्बल है नाशवान।
चारित्र मोह का दोष शेष इसलिये अल्प है बंध जान॥
तेरह में शेष नहीं रहता अरहंत दशा का है प्रभाव।
अणुभर कषाय का भाव नहीं है राग द्वेष सब का अभाव॥
प्रगटित हो गया उसे पूरा अपना निर्मल ज्ञायक स्वभाव।
है निजानंद रस लीन सदा जल्पादि विकल्पों का अभाव॥
श्री जिनवर के गुणगानमयी यह अर्घ्य समर्पित करता हूँ।
रत्नत्रयमय अनमोल भाव मैं निज को अर्पित करता हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य उत्तरदिशास्थितत्रयोदशजिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पंच परावर्तनमय चारों गतियों से मैं व्यथित हुआ।
भोगों को दुखमय जान प्रभो! भव भावों से अब थकित हुआ॥
जागी है वैराग्य भावना किन्तु नहीं पुरुषार्थ संबल।
अतः गृहस्थी में रहकर ही अणुव्रत का पाऊँ संबल॥
नंदीश्वर उत्तर दिश पूजन करते ही मन में यह आया।
कब जिनमुनि बन वन में विचरूँ अब यही भाव उर को भाया॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

महाऽर्घ्य

(नंदीश्वर विधान)

(वीरछन्द)

मध्य लोक में श्री नंदीश्वर अष्टम द्वीप प्रसिद्ध महान।
चारों दिशि में तेरह-तेरह जिनमंदिर अनुपम छवि मान॥

यहाँ सदा अवतंस आदि सुर करते प्रभु की जय जय कार।
अष्टान्हिका पर्व में इन्द्रादिक पूजन करते सुखकार॥
कार्तिक फागुन अरु अषाढ में अंतिम आठ दिवस चहुँ ओर।
चंपक आम्र अशोक सप्तच्छद वन शोभा लख हुआ विभोर॥
कृष्णांजनगिरि दधिमुख श्वेत लाल रतिकर गिरिवर जिनधाम।
चारों ओर स्वर्णमय बावन मानों ज्यों सिद्धों के धाम॥
एक शतक वसु रत्नबिम्ब प्रत्येक जिनालय में शोभित।
नहीं शक्ति जाने की फिर भी सुनकर हूँ मैं अति मोहित॥
जलफलादि वसु द्रव्य सजाकर लाया हूँ मैं कंचन थाल।
जिन प्रभु के दर्शन करते ही हो जाता समकित तत्काल॥
भाव वन्दना विनय भावमय भरत क्षेत्र से करता हूँ।
निज परिणामों की संभाल कर सारे भव दुख हरता हूँ॥
महाअर्घ्य अर्पण करता हूँ भक्ति-विनय से हे भगवान।
ऐसा दिवस मिलेगा कब प्रभु जब होऊँगा आप समान॥
सहज शुद्ध चैतन्यराज की महिमा उर में जागी आज।
निज अनंतगुण प्रगटाऊँगा पाऊँगा मैं निजपद राज॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

(नंदीश्वर विधान)

(दोहा)

नंदीश्वर जिनचैत्य सब पूजे मैंने आज।
निजस्वभाव की शक्ति से पाऊँ सुख साम्राज्य॥

(कुण्डलिया)

पांच सहस छह शतक अरु सोलह हैं सब बिम्ब।
रत्नमयी जिनबिम्ब में मेरा भी प्रतिबिम्ब॥
मेरा भी प्रतिबिम्ब सिद्ध समय निश्चल जाना।
ध्रुव त्रैकालिक शुद्ध बुद्ध मैं भी हूँ माना॥
त्रिभुवनतिलक शीर्ष चूड़ामणि हे जगदीश्वर।
तुम सम बनने को पूजन की यह नंदीश्वर॥

(वीरछन्द)

नंदीश्वर बावन जिनगृह पूजनकर निज में करूँ विराम।
सप्त तत्त्व श्रद्धान पूर्वक सम्यक् ज्ञान ग्रहूँ अविराम॥
तत्क्षण सम्यक् चारित्र प्राप्तकर पाऊँ रत्नत्रय निष्काम।
रत्नत्रय के बिना न कोई पा सकता है शिवपुर धाम॥

सदाचार की भूमि बनाकर पहिले कर लूँ युद्ध विराम।
फिर मिथ्याभ्रम नाश हेतु लूँ भेदज्ञान का बाण ललाम॥
प्रथम मोह सेनापति जीतूँ कर कषाय का काम तमाम।
फिर योगों को नाश करूँ प्रभु शोभित करूँ स्वयं ध्रुवधाम॥

युद्ध महाभारत अब जीतूँ ज्ञानकला लेकर अविराम।
इसी कला से प्राप्त करूँगा सत्यम शिवम् सुन्दरम् धाम॥
सम्यग्दृष्टि जानता है मैं एक त्रिकाली आत्मा हूँ।
ज्ञानानंद स्वभावी चेतन मैं ही तो परमात्मा हूँ॥

पुद्गल रजकण से मेरा अब तक कुछ भी संबंध नहीं।
पुद्गल से पुद्गल बंधता है, पर मुझे न अणुभर बंध कहीं॥
बंध-मोक्ष की चर्चा भी क्यों मैं तो हूँ सदैव ही मुक्त।
शक्ति अनंतानंत पास हैं गुण अनंत से भी हूँ युक्त॥

जल्प विजल्प विकल्प न मुझमें एक मात्र शुद्धात्मा हूँ।
अति उज्ज्वल भविष्य है मेरा मैं शाश्वत सिद्धात्मा हूँ॥
बहिरात्मापन छोड़ चुका हूँ अब तो अन्तरात्मा हूँ।
परम शुद्धनय से देखूँ तो मैं ही प्रभु परमात्मा हूँ॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य द्विपंचाशत् जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(ताटंक)

सकल जगत का ज्ञानी फिर भी आत्म-ज्ञान बिन अज्ञानी।
आत्म-ज्ञान हो जाए तो फिर होऊँ सर्वागम ज्ञानी॥
आत्म-ज्ञान की अद्भुत महिमा अब मैंने पायी जिनराज।
आत्म-ज्ञान की पूंजी ले कृतकृत्य हुआ मैं हे प्रभु! आज॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

समुच्चय महाऽर्घ्य

(दोहा)

पंचेरु अस्सी भवन पूजे मैंने आज।
नंदीश्वर बावन भवन त्रिभुवन के सिरताज॥
सहसचतुर्दश दोशतक छप्पन श्री जिनबिम्ब।
पूजन कर हे नाथ अब निरखूँ निज प्रतिबिम्ब॥

(वीरछन्द)

मैं परतंत्र रहा प्रभु अब तक राग भाव को कर स्वीकार।
यदि स्वतंत्रता पाना है तो निज ज्ञायक का लूँ आधार॥
पाप पुण्य स्वभाव नहीं है यह करना होगा स्वीकार।
एक मात्र चैतन्य द्रव्य परद्रव्य-भिन्न मैं हूँ अविकार॥

देह चर्म से ढकी हुई मम हाड़ माँस का पिंजर है।
राध रक्त दुर्गंध मलभरी रोग सर्प का यह घर है॥
काल दाढ़ में खेल रहा हूँ पुण्य पाप के खेल विचित्र।
पल भर का भी पता नहीं है नहीं जानता आत्म-पवित्र॥

आव जाव से कभी न मिलता प्रभु अवकाश मुझे पलभर।
पंच परावर्तन भी मुझको कभी नहीं लगता दुखकर॥
हुआ प्राप्त थोड़ा जिन-श्रुत तो उलझा वाद विवादों में।
समकित बिन ही संयम धरता फँस झूठे जयनादों में॥

ज्ञेय लुब्धता से हे जिनवर! किया ज्ञान निज का अपमान।
कहाँ ज्ञान पाऊँगा निज का कैसे पाऊँगा निर्वाण॥
क्रूर मोह की माया में फँस निज से रहा सदा अनजान।
अब तो प्रभु उपाय बतला दो दुख का मैं कर दूँ अवसान॥

परम दयानिधि नाथ जिनेश्वर प्रगटे मुझको सम्यग्ज्ञान।
निज स्वभाव साधन का बल ले करूँ आत्मा का कल्याण॥

पंचमेरु नंदीश्वर के इकशत बत्तीस श्रेष्ठ जिनधाम।
महा अर्घ्य अर्पित करता हूँ अब निज में पाऊँ विश्राम॥

ॐ ह्रीं श्री नंदीश्वरद्वीपस्य जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये समुच्चय महाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

समुच्चय महाजयमाला

(पंचमेरु नंदीश्वर विधान)

(जोगीरासा)

पंचमेरु के अस्सी जिनगृह पूजे हैं मनभावन।
भक्तिभाव से जिन चैत्यालय सर्व किए हैं वन्दन॥
इनमें आठसहस छहसौ चालीस श्रीजिन-बिम्ब।
जिन प्रतिमा के दर्शन करके देखा निज प्रतिबिम्ब॥

अष्टमद्वीप श्री नंदीश्वर चैत्यालय हैं बावन।
चारों दिशि में पूजन करके सुख पाया मनभावन॥
इन सब में हैं पांच सहस छहसौ सोलहजिन प्रतिमा।
परम विनय से पूजन करके देखूँ अन्तर अपना॥

आठ दिवस का मंगल अवसर आया है अति पावन।
अष्ट अंगमय समकित पाऊँ है स्वामी मनभावन॥
पंचमेरु नंदीश्वर जिनगृह एक शतक बत्तीस।
इन सबमें चौदह सहस्र दो सौ छप्पन जिन ईश॥

तुम ही त्रिभुवनपति ईश्वर हो त्रिलोकाग्र के शीष।
वीतराग सर्वज्ञ जिनेश्वर मंगलमय जगदीश॥
अब मैं अपनी व्यथा सुनाऊँ सुनो ध्यान से नाथ।
तुव चरणों का ध्यान न भाया भाया परका साथ॥

(विजया)

मोह के जाल में हम उलझते रहे।
प्रभु निगोदों के चक्कर लगाते रहें॥

मोह से दूर जो भी रहे जीव वे।
मुक्ति की मंजिले नित्य पाते रहे॥

राग के राग में फँसके उत्साह से।
आस्रवों की ही दुनिया बसाते रहे॥
बंध के कष्ट हम क्षय नहीं कर सके।
चारों गतियों में हम तिलमिलाते रहे॥

पाप कर्मों से जब जब हुई कुछ घृणा।
पुण्य भावों का संचय किया मोह से॥
तत्त्व-अभ्यास के बिन बिताया समय।
मिथ्यादर्शन की जड़ तो जमाते रहे॥

निज को जाना न निज पर को जाना न पर।
बुद्धि विपरीत भावों में पलती रही॥
शुद्ध सम्यक्त्व की मिलती कैसे पवन।
वृक्ष मिथ्यात्व के ही उगाते रहे॥

पाया जब भी कभी वक्त सम्यक्त्व का।
उसको खोते रहे स्वर्ग के लोभ में॥
दुष्ट मिथ्यात्व से बंध माना नहीं।
मोह की मोहिनी में फसाते रहे॥

तत्त्वनिर्णय से कोसों रहे दूर हम।
तत्त्व-अभ्यास हमको सुहाया नहीं॥
पंचपापों से श्रृंगार हमने किया।
शुद्ध संयम से कतरा के जाते रहे॥

शुद्ध चैतन्य की भावना भायी ना।
मन में वैराग्य की कैसे आती पवन॥

जागा वैराग्य शमशान वाला हृदय।
तो उसे भी हम तत्क्षण भगाते रहे॥

विषय भोग वांछा का विष ही पिया।
ज्ञान अमृत हमें रंच भाया नहीं॥
हम कषायों का रस पी मगन हो गए।
छहों लेश्याएँ उर में सजाते रहे॥

वीतरागी की महिमा तो जानी नहीं।
हमने पूजा उन्हें भोग सुख के लिए॥
धर्म जिन को न समझा तनिक आज तक।
वीतरागी को रागी बनाते रहे॥

रागी द्वेषी कुदेवों की पूजा रची।
हमने उनको जिनेश्वर से बढ़कर लखा॥
नित सदा लालसा खोटी करते रहे।
हम महापाप के तरु उगाते रहे॥

न्याय-अन्याय हमने न जाना कभी।
भक्ष्याभक्ष्य भखा, बिन विवेकी रहे॥
दान भी दे रहे मान या लोभ वश।
अपने दुष्कर्म हम सब छिपाते रहे॥

धर्म के क्षेत्र में भी किए पाप बहु।
मायाचारी से धन का उपार्जन किया॥
सेवा करके कुपथ गामियों को रिझा।
खुद भी डूबे उन्हें भी डूबाते रहे॥

महिमा मिथ्यात्व की देख आश्चर्य है।
ये उबरने न देता है इस जीव को॥

जो भी ज्ञानी हुए वे इसे दूर कर।
शुद्ध निर्वाण सुख पूर्ण पाते रहे॥

मैं भी पाऊँ प्रभो मोह को नष्ट कर।
शुद्ध चैतन्य वैभव है दृष्टित हुआ॥
भेद-विज्ञान द्वारा ही मिलता है यह।
जिसके सर्वज्ञ भी गीत गाते रहे॥

ॐ ह्रीं श्री पंचमेरुनंदीश्वरद्वीपस्य जिनालयजिनबिम्बेभ्यो अनर्घ्यपदप्राप्तये पूर्णाऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(सोरठा)

पूजें पांचों मेरु नंदीश्वर जिनधाम सब।
करूँ आत्मकल्याण जिन-आगम अनुसार चल॥

॥ पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत् ॥

प्रभुजी अब न भटकेंगे संसार में......
अब अपनी..... हो ऽऽऽ...अब अपनी खबर हमें हो गई॥टेक॥

भूल रहे थे निज वैभव को पर को अपना माना।
विष सम पंचेन्द्रिय विषयों में ही सुख हमने जाना॥
पर से भिन्न लखा निज चेतन मुक्ति निश्चित होगी॥१॥

महापुण्य से हे जिनवर अब तेरा दर्शन पाया।
शुद्ध अतीन्द्रिय आनंद रस पीने को चित ललचाया॥
निर्विकल्प निज अनुभूति से मुक्ति निश्चित होगी॥२॥

निज को ही जानें, पहिचानें, निज में ही रम जायें।
द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित हो, शाश्वत शिवपद पायें॥
रत्नत्रय निधियाँ प्रगटायें, मुक्ति निश्चित होगी॥३॥